



प्राचीन क्रिमिला से मध्यकालीन लखीसराय तक

लाल पहाड़ी, लई और बलगुदर का पुरातात्विक एवं अभिलेखीय अध्ययन

डॉ. निगम भारद्वाज निदेशक, न्यू होप एएस कंसल्टेंट्स प्रा. लि., पटना

सार (Abstract)

बिहार के वर्तमान लखीसराय का ऐतिहासिक महत्त्व केवल आधुनिक जिले की सीमाओं के भीतर रहकर पूरी तरह नहीं समझा जा सकता। यह क्षेत्र एक व्यापक ऐतिहासिक भूदृश्य का अंग था, जिसे प्रारंभिक मध्यकालीन स्रोतों में क्रिमिला (Krimilā), क्रिमिला-विषय और क्रिमिलाधिष्ठान के नाम से जाना गया है। लाल पहाड़ी, लई और बलगुदर जैसे पुरातात्विक स्थल इस क्षेत्र के राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।

इन स्थलों में बलगुदर अपने अभिलेखीय साक्ष्य के कारण विशेष महत्त्व रखता है। बलगुदर (बलगुदर) से प्राप्त तीन अभिलेख, जिन्हें डी. सी. सरकार ने प्रकाशित किया, क्रिमिला तथा क्रिमिलाधिष्ठान का उल्लेख करते हैं। ये अभिलेख बलगुदर क्षेत्र को ऐतिहासिक क्रिमिला से जोड़ने का महत्वपूर्ण आधार देते हैं (Sircar 137–45)। साथ ही ये यह भी दर्शाते हैं कि धर्मपाल के काल से लेकर परवर्ती पाल काल तक यह क्षेत्र ऐतिहासिक रूप से सक्रिय बना रहा।

लाल पहाड़ी इस ऐतिहासिक भूदृश्य का एक भिन्न किंतु पूरक आयाम प्रस्तुत करती है। वर्ष 2017 से 2021 के बीच हुए पुरातात्विक उत्खननों में एक विशाल बौद्ध विहार-परिसर प्रकाश में आया, जिसकी पहचान उत्खनन-प्रतिवेदन में श्रीमद् धर्म विहार के रूप में की गई है। इसकी वर्गाकार योजना, केंद्रीय आँगन, आवासीय कक्ष, बरामदे, जल-निकासी की व्यवस्था, ईंटों की संरचनाएँ, मूर्तियाँ, अभिलेख और अन्य पुरावशेष एक सुसंगठित मठीय संस्था के अस्तित्व की ओर संकेत करते हैं (Kumar 33–72)। वैज्ञानिक विश्लेषण उत्खनित विहार के प्रमुख आवासन-काल को ग्यारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के बीच रखता है (Kumar 321–52)।

यह स्थल पूर्वी भारत की बौद्ध धार्मिक परंपराओं के अध्ययन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। लाल पहाड़ी से संबद्ध मूर्तिकला और पुरातात्विक साक्ष्य उस महायान-वज्रयान धार्मिक परिवेश को प्रतिबिंबित करते हैं जो प्रारंभिक मध्यकाल में पूर्वी भारत में विकसित हुआ (Kumar 261–314)। भिक्षुणी विजयश्री भद्रा और दानदात्री मल्लिका देवी से जुड़े साक्ष्य बौद्ध धार्मिक संस्थाओं में स्त्रियों की सहभागिता पर भी महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं (Kumar 261–314)।

लई से प्राप्त विक्रमादेवी का अभिलेख क्षेत्र के सामाजिक इतिहास का एक और आयाम खोलता है। इसमें यक्षपाल की पट्टमहिषी (प्रमुख रानी) विक्रमादेवी द्वारा एक प्रतिमा के निर्माण का उल्लेख है। यक्षपाल की पहचान *दानपति* और *वासागारिक* जैसी उपाधियों से होती है, जो किसी महत्वपूर्ण प्रशासनिक अथवा दरबारी पद की ओर संकेत करती हैं (Inscriptions of Bihar 118)। यह अभिलेख इसलिए विशेष है कि यह अभिजात सामाजिक परिवेश की एक स्त्री के धार्मिक संरक्षण को दर्ज करता है।

समग्र रूप से देखें तो लाल पहाड़ी, लई और बलगुदर को केवल पृथक पुरातात्विक स्थलों के रूप में नहीं, बल्कि प्राचीन क्रिमिला से संबद्ध एक व्यापक सांस्कृतिक भूदृश्य के विभिन्न घटकों के रूप में समझा जा सकता है। बलगुदर इसका प्रशासनिक एवं नगरीय आयाम, लाल पहाड़ी बौद्ध मठीय आयाम तथा लई अभिजात सामाजिक-धार्मिक आयाम का प्रतिनिधित्व करता है। इनका संयुक्त अध्ययन धर्म, राजसत्ता, नगरीय जीवन, संरक्षण, कलात्मक उत्पादन और स्थानीय समाज के बीच जटिल अंतर्क्रिया को उजागर करता है।

मुख्य शब्द: क्रिमिला, लखीसराय, लाल पहाड़ी, श्रीमद् धर्म विहार, लई, बलगुदर, पाल वंश, धर्मपाल, यक्षपाल, विक्रमादेवी, अभिलेखशास्त्र, पुरातत्त्व।

भूमिका

किसी क्षेत्र के इतिहास का पुनर्निर्माण सदैव आज की प्रशासनिक सीमाओं के अनुसार नहीं किया जा सकता। आधुनिक जिलों की भौगोलिक सीमाएँ प्राचीन और प्रारंभिक मध्यकालीन क्षेत्रीय विभाजनों से आवश्यक रूप से मेल नहीं खातीं। पूर्वकाल में क्षेत्रों का स्वरूप नदियों, संचार एवं व्यापार-मार्गों, राजनीतिक अधिकार-क्षेत्रों, बस्तियों और धार्मिक केंद्रों से निर्धारित होता था, न कि आज जैसी स्थिर प्रशासनिक रेखाओं से। अतः प्राचीन लखीसराय के ऐतिहासिक भूगोल को एक व्यापक क्षेत्रीय ढाँचे में पुनर्निर्मित करना होगा, जिसमें वर्तमान जिले के भीतर और आसपास के पुरातात्विक स्थलों तथा अभिलेखों को ध्यान में रखा जाए।

लखीसराय के संदर्भ में यह प्रश्न विशेष रूप से प्रासंगिक है, क्योंकि वर्तमान जिला अपेक्षाकृत नवीन प्रशासनिक इकाई है, जिसका गठन 1994 में मुंगेर जिले से पृथक होकर हुआ। परिणामस्वरूप पूर्ववर्ती पुरातात्विक एवं अभिलेखीय शोध का अधिकांश भाग "मॉन्थीर" अथवा मुंगेर के भौगोलिक नाम से प्रकाशित हुआ। जो स्थल आज लखीसराय के अंतर्गत माने जाते हैं, वे पुरानी रिपोर्टों और प्रकाशनों में अपने पूर्व जिले के नाम से मिल सकते हैं। पूर्व साक्ष्यों को वर्तमान भूदृश्य से जोड़ने के लिए प्रशासनिक भूगोल में आए इस परिवर्तन को ध्यान में रखना आवश्यक है।

इस भौगोलिक पृष्ठभूमि में प्राचीन क्रिमिला की पहचान और ऐतिहासिक महत्त्व पर विशेष ध्यान देना आवश्यक हो जाता है। क्षेत्र के अभिलेखों में क्रिमिला-विषय और क्रिमिलाधिष्ठान का उल्लेख मिलता है, जिससे संकेत मिलता है कि क्रिमिला नाम एक ओर प्रादेशिक विभाजन से और दूसरी ओर किसी बस्ती अथवा प्रशासनिक केंद्र से जुड़ा था। ये उल्लेख क्षेत्र के राजनीतिक और भौगोलिक संगठन के पुनर्निर्माण का महत्वपूर्ण प्रस्थान-बिंदु हैं।

बलगुदर का पुरातात्विक साक्ष्य इस प्रश्न के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है। यहाँ के अभिलेख और संबद्ध अवशेष अभिलेखों में प्रमाणित क्रिमिला तथा वर्तमान लखीसराय के भूदृश्य के बीच संबंध की परख का एक सुदृढ़ आधार देते हैं। बलगुदर को एक पृथक स्थल मानने के बजाय उसे उस व्यापक क्षेत्रीय परिवेश में रखकर देखना अधिक उपयोगी है, जिसमें राजनीतिक सत्ता, बस्तियाँ, धार्मिक संस्थाएँ और आवागमन के प्रतिमान परस्पर जुड़े थे। यह दृष्टिकोण लखीसराय को प्राचीन क्रिमिला के ऐतिहासिक भूदृश्य के अंग के रूप में परखने की उपयोगी नींव रखता है।

बलगुदर के तीन अभिलेखों पर डी. सी. सरकार का अध्ययन इस चर्चा के लिए आज भी आधारभूत बना हुआ है (Sircar 137–45)।

लाल पहाड़ी इस अध्ययन में एक महत्वपूर्ण धार्मिक आयाम जोड़ती है। 2017 से 2021 के बीच हुए उत्खननों में एक विशाल बौद्ध विहार सामने आया, जिसके स्थापत्य अवशेष एक सुसंगठित मठीय प्रतिष्ठान का संकेत देते हैं (Kumar 33–72)।

इस अध्ययन में विचारित तीसरा प्रमुख स्थल लई है। इसका महत्त्व विशेष रूप से विक्रमादेवी से संबद्ध अभिलेख के कारण है। यह अभिलेख धार्मिक संरक्षण, अभिजात समाज, प्रशासनिक संरचनाओं और धार्मिक गतिविधियों में स्त्रियों की सहभागिता के संबंध में मूल्यवान साक्ष्य प्रदान करता है (*Inscriptions of Bihar* 118)।

इस अध्ययन का मूल तर्क यह है कि इन तीनों स्थलों को अलग-अलग देखने के बजाय एक साथ परखा जाना चाहिए। इनके पुरातात्विक और अभिलेखीय साक्ष्य एक जटिल ऐतिहासिक भूदृश्य के अस्तित्व का संकेत देते हैं, जिसमें नगरीय बस्ती, धार्मिक संस्थाएँ, राजनीतिक सत्ता और सामाजिक संरक्षण एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े थे।

शोध-समस्या एवं उद्देश्य

क्रिमिला की ऐतिहासिक पहचान लंबे समय से इतिहासकारों और पुरातत्त्वविदों के आकर्षण का विषय रही है। अभिलेखीय स्रोतों में क्रिमिला और क्रिमिलाधिष्ठान के उल्लेख मिलते हैं, किंतु किसी प्राचीन ग्रंथगत स्थान-नाम को आधुनिक पुरातात्विक स्थल से जोड़ने के लिए अभिलेखीय और पुरातात्विक साक्ष्यों का सावधानीपूर्वक समन्वय आवश्यक होता है।

इस दृष्टि से बलगुदर के अभिलेख विशेष महत्त्व रखते हैं। *क्रिमिलाधिष्ठान* का उल्लेख संकेत देता है कि यह स्थान किसी साधारण ग्रामीण बस्ती से अधिक था। यह पद किसी प्रशासनिक अथवा नगरीय केंद्र की ओर इंगित करता है, और इसलिए क्रिमिला के ऐतिहासिक भूगोल में बलगुदर की व्याख्या का महत्वपूर्ण आधार बनता है (Sircar 137–45)।

इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

- क्रिमिला की ऐतिहासिक पहचान और भौगोलिक महत्त्व की परीक्षा करना।
- बलगुदर के अभिलेखीय साक्ष्य का विश्लेषण करना।

- लाल पहाड़ी के स्थापत्य एवं पुरातात्विक महत्त्व का परीक्षण करना।
- श्रीमद् धर्म विहार द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने वाले बौद्ध संस्थागत इतिहास को समझना।
- विक्रमादेवी के लई अभिलेख के सामाजिक एवं ऐतिहासिक निहितार्थों का विश्लेषण करना।
- धार्मिक संरक्षण में स्त्रियों की सहभागिता की जाँच करना।
- क्षेत्र में बौद्ध और ब्राह्मणीय परंपराओं के सह-अस्तित्व पर विचार करना।
- लखीसराय को पृथक पुरातात्विक स्थलों के संग्रह के बजाय एक व्यापक सांस्कृतिक भूदृश्य के रूप में पुनर्निर्मित करना।

स्रोत एवं शोध-पद्धति

क्रिमिला के ऐतिहासिक भूदृश्य का पुनर्निर्माण मुख्यतः तीन परस्पर संबद्ध साक्ष्य-समूहों पर आधारित है। पहला अभिलेखीय है। डी. सी. सरकार द्वारा प्रकाशित बलगुदर के तीन अभिलेख क्षेत्र के राजनीतिक एवं प्रशासनिक इतिहास को समझने के लिए महत्वपूर्ण साक्ष्य देते हैं (Sircar 137–45)। लई का अभिलेख, जिसमें यक्षपाल की पत्नी विक्रमादेवी के संरक्षण का उल्लेख है, अभिजात सामाजिक संजालों, धार्मिक संरक्षण और क्षेत्रीय पदाधिकारियों की ओर ध्यान आकृष्ट करके इस साक्ष्य में एक और आयाम जोड़ता है (*Inscriptions of Bihar* 118)।

दूसरा साक्ष्य-समूह पुरातात्विक है, जिसमें लाल पहाड़ी के उत्खनन सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। उत्खनन-प्रतिवेदन स्थापत्य, स्तरक्रम, मृदांड, पुरावशेष, अभिलेख और वैज्ञानिक विश्लेषणों के साक्ष्य को एक साथ प्रस्तुत करता है, जिससे इस स्थल को केवल एक पृथक धार्मिक स्मारक के रूप में नहीं, बल्कि एक बृहत्तर ऐतिहासिक परिवेश के अंग के रूप में परखा जा सकता है (Kumar 73–352)। यह पुरातात्विक सामग्री क्षेत्र में बस्ती और धार्मिक गतिविधि की कालानुक्रमिक स्थिति और स्वरूप के मूल्यांकन में विशेष रूप से उपयोगी है।

तीसरा साक्ष्य-समूह पूर्वी भारतीय पुरातत्त्व, पाल-कालीन कला, अभिलेखशास्त्र और नगरीय विकास पर आधुनिक विद्वत्तापूर्ण अध्ययनों से बना है। ये अध्ययन बलगुदर, लई और लाल पहाड़ी के साक्ष्य को पूर्वी भारत के व्यापक ऐतिहासिक विकासक्रम में समझने के लिए आवश्यक तुलनात्मक ढाँचा प्रदान करते हैं (Asher 227–46)।

यह अध्ययन एक अंतर-अनुशासनिक दृष्टि अपनाता है, जिसमें पुरातत्त्व और अभिलेखशास्त्र का संवाद स्थापत्य एवं सामाजिक इतिहास से कराया गया है। अतः अभिलेखों को केवल पृथक पाठ-अभिलेख के रूप में नहीं देखा गया है, और न ही पुरातात्विक अवशेषों को उनके ऐतिहासिक संदर्भ से अलग करके परखा गया है। दोनों प्रकार के साक्ष्यों को साथ-साथ पढ़कर राजनीतिक सत्ता, बस्ती, धार्मिक संस्थाओं, संरक्षण और सामाजिक संबंधों से जुड़े प्रश्नों की जाँच की गई है। यह समन्वित पद्धति स्थल-दर-स्थल वर्णन से आगे बढ़कर प्राचीन क्रिमिला से संबद्ध व्यापक ऐतिहासिक भूदृश्य की पड़ताल संभव बनाती है।

प्राचीन क्रिमिला और बलगुदर: अभिलेखीय एवं नगरीय संदर्भ

प्रारंभिक मध्यकालीन अभिलेखीय परंपरा में क्रिमिला एक महत्वपूर्ण भौगोलिक और राजनीतिक अभिधान के रूप में उभरती है। क्रिमिला-विषय और क्रिमिलाधिष्ठान के उल्लेख यह दर्शाते हैं कि यह नाम केवल एक प्रादेशिक विभाजन से ही नहीं, बल्कि प्रशासनिक महत्त्व की एक बस्ती से भी जुड़ा था। जब इन उल्लेखों को बलगुदर के पुरातात्विक साक्ष्य के साथ रखकर देखा जाता है, तब ये विशेष महत्त्व प्राप्त कर लेते हैं, क्योंकि बलगुदर इस क्षेत्र के ऐतिहासिक भूदृश्य को समझने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध कराता है।

डी. सी. सरकार द्वारा प्रकाशित बलगुदर के तीन अभिलेख इस स्थान को क्रिमिला से जोड़ने का मुख्य अभिलेखीय आधार हैं (Sircar 137–45)। इनका कालक्रम भी उतना ही महत्वपूर्ण है। प्रारंभिक अभिलेख मोटे तौर पर आठवीं-नौवीं शताब्दी के हैं, जबकि एक अन्य अभिलेख बारहवीं शताब्दी का है। इतने लंबे कालखंड में अभिलेखीय साक्ष्य की उपस्थिति यह संकेत देती है कि पाल शासन की क्रमिक अवस्थाओं में बलगुदर और उसके आसपास का क्षेत्र राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक दृष्टि से प्रासंगिक बना रहा (Sircar 137–45)।

इन अभिलेखों में *क्रिमिलाधिष्ठान* का उल्लेख विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस पद को आधुनिक अर्थों में पूर्ण विकसित नगरीय केंद्र का प्रमाण स्वतः नहीं मान लेना चाहिए। फिर भी यह ऐसी बस्ती की ओर संकेत करता है जिसका कुछ प्रशासनिक या राजनीतिक महत्त्व था। जब यह पाठ्य-साक्ष्य बलगुदर के पुरावशेषों के साथ रखा जाता है, तब इस स्थान को क्रिमिला के ऐतिहासिक केंद्र के अंग के रूप में परखने का अधिक सुदृढ़ आधार बनता है।

बलगुदर और पाल राजनीतिक परिदृश्य

बलगुदर का पुरातात्विक स्वरूप उसके ऐतिहासिक महत्त्व को और पुष्ट करता है। मूर्तिकला के अवशेष, ईंटों की संरचनाएँ, अभिलेख और अन्य पुरातात्विक सामग्री इस स्थल पर निरंतर मानवीय एवं धार्मिक गतिविधि का संकेत देती हैं। यहाँ बौद्ध और ब्राह्मणीय, दोनों परंपराओं की मूर्तियों की प्राप्ति विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है, क्योंकि वह ऐसे धार्मिक परिवेश की ओर संकेत करती है जिसमें एक से अधिक परंपराएँ प्रतिनिधित्व पाती थीं (Asher 227–46)।

अभिलेख धार्मिक गतिविधि को राजनीतिक और सामाजिक संरचनाओं से भी जोड़ते हैं। पाल शासकों, दानदाताओं और धार्मिक प्रतिमाओं की स्थापना अथवा समर्पण के उल्लेख यह संकेत देते हैं कि धार्मिक संरक्षण ऐसे तंत्र के माध्यम से संचालित होता था जिसमें राजसत्ता और व्यक्तिगत दानदाता, दोनों सम्मिलित थे (Sircar 137–45)। इस प्रकार बलगुदर को केवल एक धार्मिक स्थल नहीं, बल्कि ऐसा स्थान माना जा सकता है जहाँ राजनीतिक सत्ता, धार्मिक आचरण और स्थानीय सामाजिक गतिविधि का संगम होता था।

धर्मपाल और पूर्ववर्ती अभिलेखीय साक्ष्य

बलगुदर का एक अभिलेख धर्मपाल के शासनकाल से संबद्ध है और उसमें *क्रिमिलाधिष्ठान* पद आया है। यह उल्लेख पाल काल के राजनीतिक भूगोल के पुनर्निर्माण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह इस स्थान को पाल राज्य के भीतर एक प्रादेशिक एवं प्रशासनिक अभिधान से जोड़ता है (Sircar 137–45)।

साथ ही यह अभिलेख शासक के स्तर से नीचे के धार्मिक संरक्षण का भी प्रमाण देता है। अभिलेख के एक पाठ में अज्जुका (Ajhukā) नामक स्त्री का किसी धार्मिक दान के संदर्भ में उल्लेख मिलता है। अभिलेख के कुछ अंश अब भी व्याख्या-सापेक्ष हैं, और कुछ शब्दों के अनिश्चित पाठ के कारण दान को बिना किसी शर्त के किसी विशिष्ट देवता से जोड़ना उचित नहीं होगा। जो बात अपेक्षाकृत निश्चित रूप से कही जा सकती है, वह यह है कि यह अभिलेख धार्मिक संरक्षण में व्यक्तिगत, और स्त्रियों की भी, सहभागिता का प्रमाण प्रस्तुत करता है (Sattar)।

यह अंतर क्रिमिला के सामाजिक इतिहास को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। अभिलेखों में प्रतिबिंबित धार्मिक भूदृश्य केवल राजकीय संरक्षण से नहीं बना था। व्यक्तियों ने भी धार्मिक संस्थाओं और आचरणों के निर्माण तथा संरक्षण में भाग लिया, जो स्थानीय धार्मिक सहयोग के एक व्यापक तंत्र का संकेत देता है।

मदनपाल और क्रिमिला की निरंतरता

बलगुदर का परवर्ती अभिलेख, जो मदनपाल से संबद्ध है, इस अभिलेखीय इतिहास को बारहवीं शताब्दी तक ले जाता है। अभिलेख शक 1083 और शासक के अठारहवें राज्य-वर्ष का है, जो लगभग 1161 ई. के अनुरूप है (Sircar 137–45)। इसकी कालक्रमिक स्थिति इसलिए महत्वपूर्ण है कि यह प्रदर्शित करती है कि इस स्थान का ऐतिहासिक महत्त्व धर्मपाल के शासन से आगे भी बना रहा।

अभिलेखों का यह क्रम इसलिए अधिकार या संरक्षण के किसी एक प्रसंग का नहीं, बल्कि निरंतरता का साक्ष्य है। प्रारंभिक पाल काल से बारहवीं शताब्दी तक बलगुदर राजसत्ता और धार्मिक गतिविधि से जुड़ा रहा। यह साक्ष्य अपने आप में इस पूरी अवधि में नगरीय बस्ती की अविच्छिन्न उपस्थिति सिद्ध नहीं करता, किंतु यह क्षेत्र के बदलते राजनीतिक और धार्मिक परिदृश्य में इस स्थान के निरंतर महत्त्व की ओर अवश्य संकेत करता है।

समग्र रूप से अभिलेख और पुरातात्विक अवशेष बलगुदर को प्राचीन क्रिमिला के पुनर्निर्माण का एक निर्णायक संदर्भ-बिंदु बनाते हैं। वे ऐसे भूदृश्य को प्रकट करते हैं जिसमें प्रादेशिक प्रशासन, राजसत्ता, धार्मिक संस्थाएँ और व्यक्तिगत संरक्षण परस्पर जुड़े थे। यही साक्ष्य बलगुदर की तुलना क्षेत्र के अन्य प्रमुख स्थलों, विशेषतः लाल पहाड़ी और लई, से करने का आधार भी देता है, ताकि यह परखा जा सके कि ये स्थल किसी व्यापक और अंतर्संबद्ध सांस्कृतिक भूदृश्य के अंग थे या नहीं।

लाल पहाड़ी और श्रीमद् धर्म विहार

2017 से 2021 के बीच हुए उत्खननों के बाद लाल पहाड़ी का पुरातात्विक महत्त्व काफी बढ़ गया है। इन उत्खननों में एक बौद्ध मठीय परिसर के अवशेष प्रकाश में आए, जिसकी पहचान उत्खनन-प्रतिवेदन में **श्रीमद् धर्म विहार** के रूप में की गई है (Kumar 33–72)।

विहार का निर्माण पहाड़ी के शिखर पर हुआ था। इसकी मूल योजना लगभग वर्गाकार थी और प्रवेश-द्वार पूर्वी दिशा में था। आवासीय कक्ष केंद्रीय आँगन के चारों ओर व्यवस्थित थे, जबकि बरामदे पूरे परिसर में आवागमन का मार्ग प्रदान करते थे (Kumar 33–72)।

उत्खनन-प्रतिवेदन तेईस कक्षों की पहचान करता है, जिनमें छह आपस में जुड़े हुए कक्ष भी हैं। कुछ कक्षों में चबूतरे और जल-निकासी की व्यवस्था मिली है, जो आवासीय और कार्यात्मक आवश्यकताओं पर सावधानीपूर्वक ध्यान दिए जाने का संकेत देती है (Kumar 33–72)। यह स्थापत्य-संगठन दर्शाता है कि यह विहार असंबद्ध संरचनाओं का समूह नहीं, बल्कि एक नियोजित संस्था था।

स्थापत्य की विशेषताएँ

विहार की प्रमुख स्थापत्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं:

- वर्गाकार समग्र योजना;
- पूर्वी प्रवेश-द्वार;
- केंद्रीय आँगन;
- आवासीय कक्ष;
- चार बरामदा-पथ;
- जल-निकासी की व्यवस्था;
- पत्थर की नींव पर आधारित वृत्ताकार संरचनाएँ;
- कोनों पर छोटी ईंट-संरचनाएँ।

इन विशेषताओं का संयोजन अपेक्षाकृत परिष्कृत मठीय स्थापत्य-परंपरा का संकेत देता है (Kumar 33–72)। कुछ कक्षों से जुड़े निजी स्थान और जल-निकासी की व्यवस्था विशेष रूप से रोचक हैं। उत्खनन-प्रतिवेदन इन्हें महिला-आवास या उपयोग के संभावित संकेत के रूप में देखता है (Kumar 33–72)। किंतु ऐसी व्याख्याओं को तब तक अस्थायी ही माना जाना चाहिए, जब तक अतिरिक्त पुरातात्विक साक्ष्य उनका समर्थन न करें।

लाल पहाड़ी का कालक्रम

लाल पहाड़ी की सबसे महत्वपूर्ण पद्धतिगत समस्याओं में से एक है – व्यक्तिगत पुरावस्तुओं की पुरालिपिगत तिथि और मुख्य स्थापत्य-परिसर की वैज्ञानिक तिथि के बीच का अंतर।

लाल पहाड़ी से संबद्ध कुछ मुहरों को पहले पुरालिपि के आधार पर लगभग आठवीं या नौवीं शताब्दी का माना गया है। एक प्रकाशित पाठ में *श्रीमद्भगवद्गीता* का *विहारिकार्यभिक्षुसंघस्य* पद आया है, जो एक संस्थागत बौद्ध संदर्भ का संकेत देता है।

किंतु मुख्य उत्खनित विहार की तिथि रेडियोकार्बन विश्लेषण द्वारा ग्यारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक निर्धारित की गई है (Kumar 321–52)। ये तिथियाँ अनिवार्यतः परस्पर विरोधी नहीं हैं। वे स्थल के इतिहास की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं का प्रतिनिधित्व कर सकती हैं। संभव है कि उत्खनित स्थापत्य द्वारा प्रदर्शित विहार के निर्माण या व्यापक पुनर्निर्माण से पहले भी वहाँ धार्मिक गतिविधि रही हो।

इसलिए पुरालिपिगत साक्ष्य को वर्तमान विहार की निर्माण-तिथि नहीं मान लेना चाहिए। साथ ही, यह इस ओर संकेत अवश्य करता है कि लाल पहाड़ी का धार्मिक इतिहास मुख्य उत्खनित चरण से पहले तक विस्तृत हो सकता है।

लाल पहाड़ी और महायान-वज्रयान परंपरा

लाल पहाड़ी से प्राप्त धार्मिक कला पूर्वी भारत में बौद्ध परंपराओं के विकास को समझने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। उत्खनन-प्रतिवेदन अवलोकितेश्वर और मंजुश्री जैसी आकृतियों से संबद्ध मूर्तियों और कलात्मक सामग्री का उल्लेख करता है (Kumar 261–314)। एक विशिष्ट कलात्मक फलक में अवलोकितेश्वर और मंजुश्री को गतिशील संयोजन में दर्शाया गया है। लाल पहाड़ी के मूर्तिशिल्पीय और प्रतिमाशास्त्रीय अवशेषों को पाल काल में पूर्वी भारत में विकसित महायान बौद्ध कलात्मक परंपराओं के व्यापक संदर्भ में समझा जा सकता है। ऐसी प्रतिमाओं की उपस्थिति इस विहार को उस व्यापक धार्मिक परिवेश में रखने का आधार भी देती है जिसमें वज्रयान साधनाएँ और बौद्ध प्रतिमाशास्त्र के रूप निरंतर प्रमुखता प्राप्त कर रहे थे।

फिर भी उपलब्ध साक्ष्य लाल पहाड़ी को किसी विशेष वज्रयान संप्रदाय या सैद्धांतिक परंपरा से विशिष्ट रूप से जोड़ने का औचित्य नहीं देता। व्यक्तिगत मूर्तियाँ और प्रतिमाशास्त्रीय अभिप्राय धार्मिक संबद्धता और सांस्कृतिक संपर्कों के सूचक हो सकते हैं, किंतु वे अपने आप में किसी विहार की सटीक संस्थागत पहचान स्थापित नहीं करते। अतः अधिक संतुलित व्याख्या यही है कि लाल पहाड़ी को पहली सहस्राब्दी के अंतिम और दूसरी सहस्राब्दी के प्रारंभिक कालखंड में पूर्वी भारत के व्यापक महायान-वज्रयान बौद्ध परिवेश का अंग माना जाए (Kumar 261–314)।

जब लाल पहाड़ी को क्षेत्र के प्रमुख बौद्ध केंद्रों, जैसे नालंदा और विक्रमशिला, के साथ रखकर देखा जाता है, तब यह व्याख्या और अर्थपूर्ण हो जाती है। ये संस्थान मठीय शिक्षा, धार्मिक साधना, कलात्मक उत्पादन और संरक्षण के एक विस्तृत तंत्र का हिस्सा थे। लाल पहाड़ी को इसलिए एक क्षेत्रीय मठीय प्रतिष्ठान के रूप में समझा जा सकता है, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस बृहत्तर बौद्ध भूदृश्य से जुड़ा था। इसका महत्त्व इसके आकार या संस्थागत स्तर में नहीं, बल्कि इस साक्ष्य में निहित है कि सर्वाधिक प्रसिद्ध मठीय केंद्रों से परे भी बौद्ध धार्मिक संस्कृति का प्रसार और स्थानीय अभिव्यक्ति हुई।

लाल पहाड़ी और लई में स्त्रियाँ, संरक्षण और अभिजात समाज

लाल पहाड़ी और लई का साक्ष्य उन सामाजिक समूहों पर महत्वपूर्ण दृष्टि प्रदान करता है जो क्षेत्र के धार्मिक जीवन में सहभागी थे। विशेष रूप से स्त्रियों से जुड़े अभिलेख धार्मिक संरक्षण के उन रूपों को देखने का अवसर देते हैं जो शासकों और राजवंशों पर केंद्रित राजनीतिक आख्यानों में प्रायः कम दिखाई देते हैं।

लाल पहाड़ी में सिंहनाद अवलोकितेश्वर की प्रतिमा इस दृष्टि से उल्लेखनीय साक्ष्य है। उत्खनन-प्रतिवेदन के अनुसार यह प्रतिमा अब सेंट पीटर्सबर्ग के स्टेट हर्मिटेज संग्रहालय में सुरक्षित है। इसके अभिलेख में वृद्ध भिक्षुणी विजयश्री भद्रा का उल्लेख है और मल्लिका देवी से संबद्ध दानों का अभिलेखन किया गया है (Kumar 261–314)। यह अभिलेख इसलिए महत्वपूर्ण है कि इसमें स्त्री-सहभागिता के दो रूप एक साथ दिखते हैं: भिक्षुणी विजयश्री भद्रा द्वारा प्रतिनिधित्व किया गया मठीय संबंध और मल्लिका देवी से जुड़ा संरक्षण।

मल्लिका देवी की पहचान के विषय में सावधानी आवश्यक है। विद्वत्त्वर्चा में उन्हें पाल शासक सूरपाल की पत्नी से जोड़ने का प्रस्ताव आया है, किंतु उपलब्ध साक्ष्य इस पहचान को संदेह से परे स्थापित नहीं करता (Kumar 261–314)। अतः यह अभिलेख किसी विशिष्ट राजसी संबंध के प्रमाण की अपेक्षा विहार की धार्मिक अर्थव्यवस्था में स्त्रियों की संलग्नता के साक्ष्य के रूप में अधिक सुरक्षित ढंग से प्रयुक्त हो सकता है।

लई का अभिलेख एक भिन्न सामाजिक परिवेश का पूरक उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह अभिलेख, जिसे "लई प्रतिमा-अभिलेख: यक्षपाल की पत्नी विक्रमादेवी" के रूप में जाना जाता है, संस्कृत में है और पुरालिपि की दृष्टि से उत्तर भारतीय लिपि की पूर्वी शैली का है, जिसे सामान्यतः बारहवीं शताब्दी में रखा जाता है। इसमें विक्रमादेवी द्वारा निर्मित एक प्रतिमा का उल्लेख है, जिन्हें यक्षपाल की पट्टमहिषी (प्रमुख रानी) कहा गया है (*Inscriptions of Bihar* 118)।

लई के अभिलेख का महत्त्व धार्मिक वस्तु से आगे तक जाता है। वह प्रतिमा-संरक्षण को एक अभिजात परिवार से जोड़ता है और क्षेत्र के धार्मिक एवं सामाजिक जीवन में स्त्रियों की सहभागिता का साक्ष्य देता है। प्रतिमा के निर्माण में विक्रमादेवी की भूमिका यह संकेत देती है कि अभिजात स्त्रियाँ धार्मिक संरक्षण के माध्यम से आर्थिक और सामाजिक कर्तृत्व का प्रयोग कर सकती थीं।

यक्षपाल की स्थिति को, तथापि, शासक राजा की स्थिति से अलग रखकर देखना आवश्यक है। यद्यपि कुछ परवर्ती विवरणों में उन्हें राजा कहा गया है, अभिलेख स्वयं *दानपति* और *वासागारिक* पदों का प्रयोग करता है। इनमें से दूसरा पद राजकीय निवास या अंतःपुर से जुड़े अधिकारी का सूचक है (*Inscriptions of Bihar* 118)। ये उपाधियाँ बताती हैं कि यक्षपाल का स्थान पर्याप्त प्रतिष्ठित था, परंतु इनसे यह सिद्ध नहीं होता कि वे स्वतंत्र शासक थे। उनके नाम से पाल राजवंश के साथ संबंध की जो संभावना सुझाई गई है, उसे भी स्थापित वंशावली के रूप में नहीं, बल्कि एक संभावना के रूप में ही देखा जाना चाहिए (*Inscriptions of Bihar* 118)।

इस प्रकार विक्रमादेवी का संरक्षण राजनीतिक स्थिति, गृह-सत्ता और धार्मिक गतिविधि के पारस्परिक संबंध को समझने की दृष्टि से विशेष रूप से मूल्यवान है। उनका कार्य दर्शाता है कि धार्मिक संरक्षण राजाओं या पुरुष अधिकारियों तक सीमित नहीं था। अभिजात स्त्रियाँ भी अपने संसाधनों और सामाजिक स्थिति का उपयोग धार्मिक आचरण और पवित्र प्रतिमाओं के निर्माण को समर्थन देने में कर सकती थीं।

जब लई के साक्ष्य को बलगुदर और लाल पहाड़ी के अभिलेखों के साथ रखा जाता है, तब वह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। बलगुदर में अञ्जुका का उल्लेख, लाल पहाड़ी में भिक्षुणी विजयश्री भद्रा की उपस्थिति और लई में विक्रमादेवी का संरक्षण स्त्रियों की धार्मिक संस्थाओं और आचरणों के साथ सहभागिता के भिन्न-भिन्न रूपों को दर्शाते हैं (Sattar; *Inscriptions of Bihar* 118)। इन्हें समान सामाजिक भूमिकाओं का प्रमाण नहीं मानना चाहिए। ये मठीय सहभागिता से लेकर व्यक्तिगत दान और अभिजात गृहस्थ संरक्षण तक की संभावनाओं के विस्तार को दिखाते हैं।

इन अभिलेखों को एक साथ पढ़ने पर प्राचीन क्रिमिला का सामाजिक इतिहास अधिक व्यापक हो जाता है। वे सुझाते हैं कि क्षेत्र का धार्मिक भूदृश्य केवल शासकों और औपचारिक संस्थाओं से नहीं, बल्कि उन व्यक्तियों से भी पोषित था जिनके संरक्षण, संसाधनों और

धार्मिक प्रतिबद्धताओं ने पवित्र स्थानों और वस्तुओं के निर्माण एवं रखरखाव में योगदान दिया। विशेष रूप से स्त्रियों की सहभागिता प्रारंभिक मध्यकालीन पूर्वी भारत में धार्मिक जीवन को सहारा देने वाले सामाजिक संजालों पर महत्वपूर्ण दृष्टि प्रदान करती है।

बलगुदर और लई: धर्म और प्रशासन

बलगुदर और लई का साक्ष्य तब विशेष रूप से सूचनाप्रद हो जाता है जब दोनों स्थलों को साथ रखकर देखा जाए।

बलगुदर निम्नलिखित का साक्ष्य देता है:

- क्रिमिलाधिष्ठान;
- पाल राजनीतिक सत्ता;
- धार्मिक दान;
- प्रतिमा-स्थापना;
- दीर्घकालीन नगरीय गतिविधि (Sircar 137–45)।

लई निम्नलिखित का साक्ष्य देता है:

- अभिजात सामाजिक संजाल;
- प्रशासनिक पद;
- स्त्रियों द्वारा धार्मिक संरक्षण;
- प्रतिमा-स्थापना (*Inscriptions of Bihar* 118)।

साक्ष्य के ये दोनों समूह सुझाते हैं कि क्रिमिला क्षेत्र में धार्मिक जीवन राजनीतिक और सामाजिक संरचनाओं से घनिष्ठ रूप से जुड़ा था। धार्मिक संस्थाएँ अपने आसपास के समाज से पूर्णतः पृथक होकर कार्य नहीं करती थीं। उनका अस्तित्व दानदाताओं, अधिकारियों, शिल्पियों और स्थानीय समुदायों के तंत्र पर निर्भर था।

बौद्ध और ब्राह्मणीय धार्मिक परंपराएँ

लखीसराय क्षेत्र का पुरातात्विक साक्ष्य धार्मिक विविधता को प्रदर्शित करता है। बलगुदर क्षेत्र और उसके आसपास से बौद्ध और ब्राह्मणीय, दोनों प्रकार की मूर्तियों की पहचान की गई है (Asher 227–46)। यह साक्ष्य हमें इस क्षेत्र को केवल बौद्ध भूभाग कहने के प्रति सतर्क करता है।

पाल काल बौद्ध संस्थाओं को मिले संरक्षण के लिए प्रसिद्ध है, किंतु उसी समय ब्राह्मणीय धार्मिक परंपराएँ भी सक्रिय रहीं। विष्णु, शिव, देवी, सूर्य और बौद्ध देवताओं की प्रतिमाएँ एक ही व्यापक सांस्कृतिक परिवेश में निर्मित हुईं। इस प्रकार लखीसराय क्षेत्र प्रारंभिक मध्यकाल में धार्मिक बहुलता का एक उदाहरण प्रस्तुत करता है।

ऐसे सह-अस्तित्व को पूर्ण धार्मिक सौहार्द का प्रमाण मान लेना उचित नहीं होगा। पुरातात्विक साक्ष्य समुदायों के बीच पारस्परिक संबंधों के हर पक्ष को प्रकट नहीं कर सकता। वह इतना अवश्य प्रदर्शित करता है कि विभिन्न धार्मिक परंपराएँ एक ही व्यापक भौगोलिक और आर्थिक परिवेश का उपयोग करती थीं।

क्रिमिला की आर्थिक पृष्ठभूमि

नगरीय विकास केवल राजनीतिक प्रशासन या धार्मिक संस्थाओं पर निर्भर नहीं होता। कृषि उत्पादन, शिल्प-गतिविधि, व्यापार, परिवहन और स्थानीय बाज़ार भी उतने ही महत्वपूर्ण थे।

गंगा घाटी में क्रिमिला की अवस्थिति उसे पूर्वी भारत के विभिन्न भागों को जोड़ने वाले एक महत्वपूर्ण भौगोलिक तंत्र में रखती थी। मगध क्षेत्र और पूर्वी प्रदेशों के बीच की स्थिति ने उसके आर्थिक महत्व में योगदान दिया हो सकता है।

बलगुदर की पुरातात्विक सामग्री संकेत देती है कि वहाँ की गतिविधियाँ केवल धार्मिक कार्यों तक सीमित नहीं थीं। धार्मिक संस्थाओं को सहारा देने वाली बस्ती को शिल्पियों, आपूर्तिकर्ताओं, दानदाताओं, व्यापारियों और कृषि-उत्पादकों की आवश्यकता रही होगी।

फिर भी उपलब्ध साक्ष्य किसी विशिष्ट बाज़ार या व्यापारिक श्रेणी (गिल्ड) के निश्चित पुनर्निर्माण की अनुमति नहीं देता। ऐसी व्याख्याओं के लिए अतिरिक्त पुरातात्विक और अभिलेखीय साक्ष्य की आवश्यकता है। तथापि *क्रिमिलाधिष्ठान* पद बलगुदर को प्रशासनिक या नगरीय महत्त्व की बस्ती के रूप में देखने की व्याख्या का समर्थन करता है (Sircar 137–45)।

लाल पहाड़ी और नगरीय केंद्र

लाल पहाड़ी का बौद्ध विहार अपने आसपास के सामाजिक और आर्थिक परिवेश पर निर्भर रहा होगा। मठीय संस्थाओं को भोजन, वस्त्र, निर्माण-सामग्री, अनुष्ठान-वस्तुओं, श्रम और वित्तीय सहायता की आवश्यकता होती थी। यदि बलगुदर को क्रिमिला का नगरीय या प्रशासनिक केंद्र माना जाए, तो लाल पहाड़ी को उस व्यापक सांस्कृतिक भूदृश्य के भीतर कार्यरत धार्मिक संस्थाओं में से एक के रूप में समझा जा सकता है।

विहार और नगरीय बस्ती के बीच संबंध का प्रत्यक्ष या केवल आर्थिक होना आवश्यक नहीं था। धार्मिक संस्थाएँ शिक्षा, अनुष्ठान-सेवाएँ, तीर्थटन के अवसर और सामाजिक संजाल भी उपलब्ध कराती थीं। इन स्थलों की भौगोलिक निकटता इसलिए बस्ती और विहार के बीच आवागमन से संबंधित महत्वपूर्ण प्रश्न उठाती है। भविष्य में पुरातात्विक सर्वेक्षण और जीआईएस-आधारित मानचित्रण से यह स्थापित करने में सहायता मिल सकती है कि मध्यकाल में सड़कें, बस्तियों के समूह, जल-स्रोत और कृषि-क्षेत्र इन स्थलों को जोड़ते थे या नहीं।

भाषा और लिपि

बलगुदर और लई के अभिलेख संस्कृत में हैं। यह प्रारंभिक मध्यकालीन पूर्वी भारत की व्यापक अभिलेखीय संस्कृति के अनुरूप है। बलगुदर के अभिलेख पालों के अधीन विकसित संस्कृत अभिलेखीय संस्कृति को प्रतिबिंबित करते हैं और क्षेत्र की राजनीतिक एवं धार्मिक संस्थाओं के लिए मूल्यवान साक्ष्य प्रदान करते हैं (Sircar 137–45)। लई का अभिलेख भी अभिजात सामाजिक परिवेश में धार्मिक संरक्षण को अभिलिखित करने के लिए संस्कृत के प्रयोग को प्रदर्शित करता है (*Inscriptions of Bihar* 118)। लाल पहाड़ी का पुरालिपिगत साक्ष्य पूर्वी भारत में लिपि-विकास के अध्ययन को एक और आयाम देता है।

समग्र रूप से ये अभिलेख औपचारिक धार्मिक और प्रशासनिक संचार में संस्कृत तथा विकसित होती उत्तर भारतीय लिपियों के महत्त्व को दर्शाते हैं। साथ ही, लोकभाषा संबंधी व्यापक साक्ष्य के अभाव को इस बात का प्रमाण नहीं मानना चाहिए कि संस्कृत ही दैनिक संवाद की भाषा थी। अभिलेखीय भाषा और बोली जाने वाली भाषा का समान होना आवश्यक नहीं है।

पाल सत्ता और स्थानीय समाज

क्रिमिला का राजनीतिक इतिहास पाल काल से घनिष्ठ रूप से जुड़ा है। धर्मपाल और मदनपाल जैसे शासकों के उल्लेख इस क्षेत्र को पाल राज्य के राजनीतिक इतिहास में स्थापित करते हैं (Sircar 137–45)। किंतु एक विशाल साम्राज्य में राजनीतिक समावेशन का अर्थ यह नहीं था कि स्थानीय समाज निष्क्रिय था।

बलगुदर और लई के अभिलेख स्थानीय दानदाताओं, अधिकारियों और अभिजात परिवारों की गतिविधियों को प्रकट करते हैं। धार्मिक संस्थाएँ इसलिए समाज के अनेक स्तरों के माध्यम से कार्य करती थीं। राज्य और स्थानीय समाज के संबंध को ऐसे सरल प्रतिमान तक सीमित नहीं किया जाना चाहिए जिसमें केवल शासक ही धार्मिक संरक्षण प्रदान करते हों।

राजा और राजपरिवार संसाधन तथा वैधता प्रदान कर सकते थे, किंतु स्थानीय अधिकारी, स्त्रियाँ, धार्मिक विशेषज्ञ, शिल्पी और समाज के अन्य सदस्य भी धार्मिक संस्थाओं के संचालन में योगदान देते थे।

स्त्रियाँ और धार्मिक अर्थव्यवस्था

साक्ष्यों से उभरने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषयों में से एक है – धार्मिक संरक्षण में स्त्रियों की भूमिका। बलगुदर में अझुका का उल्लेख, लई में विक्रमादेवी का संरक्षण, और लाल पहाड़ी की बौद्ध परंपरा से संबद्ध विजयश्री भद्रा तथा मल्लिका देवी का साक्ष्य मिलकर धार्मिक जीवन में स्त्री-सहभागिता का महत्वपूर्ण प्रमाण देते हैं (Sattar; Kumar 261–314)।

स्त्रियाँ धार्मिक संस्थाओं में अनेक संभावित प्रकारों से भाग लेती थीं:

- प्रतिमाओं का निर्माण कराकर;
- दान देकर;
- मठीय समुदायों को सहायता देकर;

- महिला मठीय संस्थाओं में सहभागिता के माध्यम से;
- संरक्षण के द्वारा धार्मिक और सामाजिक स्मृति का निर्माण करके।

ये उदाहरण स्त्रियों के जीवन का संपूर्ण चित्र प्रस्तुत नहीं करते, परंतु वे यह अवश्य दर्शाते हैं कि स्त्रियाँ प्रारंभिक मध्यकालीन पूर्वी भारत की धार्मिक अर्थव्यवस्था में सक्रिय सहभागी थीं।

सांस्कृतिक भूदृश्य के रूप में क्रिमिला

बलगुदर, लाल पहाड़ी और लई का संयुक्त साक्ष्य इस क्षेत्र को एक सांस्कृतिक भूदृश्य के रूप में अवधारणात्मक रूप से समझने का अवसर देता है।

बलगुदर नगरीय और प्रशासनिक आयाम का प्रतिनिधित्व करता है।

लाल पहाड़ी बौद्ध मठीय आयाम का प्रतिनिधित्व करती है।

लई अभिजात सामाजिक और धार्मिक संजालों का साक्ष्य देता है।

इन स्थलों को साथ रखने पर ऐसा ऐतिहासिक परिवेश सुझाई देता है जिसमें

नगरीय बस्ती + धर्म + प्रशासन + संरक्षण + कलात्मक उत्पादन + सामाजिक जीवन

घनिष्ठ रूप से परस्पर जुड़े थे। यह दृष्टिकोण प्रत्येक पुरातात्विक स्थल को अलग-अलग देखने की तुलना में अधिक समग्र समझ प्रदान करता है। इसलिए क्रिमिला का महत्त्व केवल किसी प्राचीन स्थान-नाम की पहचान में नहीं, बल्कि उस स्थान से जुड़ी सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवस्था के पुनर्निर्माण में निहित है।

बारहवीं शताब्दी में परिवर्तन

बारहवीं शताब्दी पूर्वी भारत में महत्त्वपूर्ण राजनीतिक और संस्थागत परिवर्तन का काल थी। पाल राजनीतिक व्यवस्था कमज़ोर पड़ रही थी, जबकि अन्य क्षेत्रीय शक्तियाँ उत्तरोत्तर महत्त्वपूर्ण होती जा रही थीं।

लाल पहाड़ी का वैज्ञानिक साक्ष्य मठीय आवास के मुख्य काल को ग्यारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के बीच रखता है (Kumar 321–52)। लगभग उसी समय बलगुदर का मदनपाल अभिलेख यह प्रदर्शित करता है कि बारहवीं शताब्दी में भी क्रिमिला क्षेत्र पाल राजनीतिक सत्ता से जुड़ा रहा (Sircar 137–45)।

फिर भी इस क्षेत्र के अंततः हुए रूपांतरण को केवल बौद्ध धर्म के अचानक लुप्त हो जाने के रूप में वर्णित करना उचित नहीं है। धार्मिक संस्थाओं का पतन या रूपांतरण अनेक कारणों से हो सकता है, जैसे राजनीतिक संरक्षण में परिवर्तन, आर्थिक परिस्थितियाँ, व्यापार के प्रतिमान और स्थानीय सामाजिक संगठन। अतः अधिक सूक्ष्म व्याख्या आवश्यक है।

पुरातात्विक साक्ष्य और ऐतिहासिक पुनर्निर्माण

लखीसराय के इतिहास को इस तथ्य से क्षति पहुँची है कि अनेक पुरातात्विक अवशेष अलग-अलग खोजे, संग्रहीत या प्रतिवेदित किए गए। मूर्तियाँ और अभिलेख प्रायः अपने मूल संदर्भ से हटा दिए गए, जिससे बृहत्तर ऐतिहासिक भूदृश्य का पुनर्निर्माण कठिन हो गया।

लाल पहाड़ी का व्यवस्थित उत्खनन इसीलिए महत्त्वपूर्ण है कि वह संदर्भ-सहित पुरातात्विक साक्ष्य उपलब्ध कराता है। स्थापत्य, स्तरक्रम, मृद्भांड, मूर्तियाँ, अभिलेख और वैज्ञानिक विश्लेषण अब साथ-साथ अध्ययन के योग्य हैं (Kumar 73–352)।

पुरातत्त्व में संदर्भ का विशेष महत्त्व है। संदर्भहीन मूर्ति कला-शैली और धर्म के संबंध में सूचना देती है, किंतु किसी स्तरित स्थापत्य-परिसर से प्राप्त मूर्ति कालक्रम, कार्य और संस्थागत संगठन के विषय में कहीं अधिक जानकारी देती है। इसलिए लाल पहाड़ी इस क्षेत्र के भावी शोध के लिए एक पद्धतिगत प्रतिमान प्रस्तुत करती है।

साक्ष्य की सीमाएँ

कुछ सीमाओं को स्वीकार करना आवश्यक है।

पहली, प्राचीन क्रिमिला का सटीक भौगोलिक विस्तार अब भी अनिश्चित है। बलगुदर एक महत्वपूर्ण केंद्र की अवस्थिति के लिए सुदृढ़ साक्ष्य देता है, किंतु क्रिमिला का व्यापक क्षेत्र आधुनिक लखीसराय जिले से बाहर तक फैला हो सकता है।

दूसरी, अभिलेख सामान्यतः दान, प्रतिमा-स्थापना या प्रशासनिक विषयों जैसी विशिष्ट घटनाओं को अभिलिखित करते हैं। वे सामान्य सामाजिक जीवन का संपूर्ण वर्णन नहीं देते।

तीसरी, लाल पहाड़ी के कालक्रम-संबंधी साक्ष्य को सावधानी से परखा जाना चाहिए। अलग-अलग मुहरों की पुरालिपिगत तिथि और मुख्य विहार की रेडियोकार्बन तिथि भिन्न आवासीय या निर्माण-चरणों का प्रतिनिधित्व कर सकती हैं (Kumar 315–52; 321–52)।

चौथी, यक्षपाल की स्थिति अब भी अनिश्चित है। लई का अभिलेख एक महत्वपूर्ण प्रशासनिक या दरबारी पद का साक्ष्य देता है, किंतु उन्हें निर्णायक रूप से स्वतंत्र राजा सिद्ध नहीं करता (*Inscriptions of Bihar* 118)।

ये सीमाएँ साक्ष्य के महत्व को कम नहीं करतीं। इसके विपरीत, वे उन क्षेत्रों की ओर संकेत करती हैं जहाँ आगे शोध की आवश्यकता है।

ऐतिहासिक अध्ययन में लखीसराय का पुनर्मूल्यांकन

बीसवीं शताब्दी के अधिकांश भाग में बौद्ध बिहार का ऐतिहासिक आख्यान मुख्यतः नालंदा, विक्रमशिला और ओदंतपुरी जैसे बड़े केंद्रों पर ही केंद्रित रहा।

लखीसराय का पुरातात्विक साक्ष्य सुझाता है कि पूर्वी भारत के धार्मिक और नगरीय संजालों के संचालन में क्षेत्रीय केंद्रों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। लखीसराय का महत्व ठीक उसके साक्ष्य की विविधता में है।

बलगुदर क्रिमिला से अभिलेखीय संबंध प्रदान करता है। लाल पहाड़ी एक सुसंगठित बौद्ध मठीय संस्था को प्रकट करती है। लई अभिजात संरक्षण और स्त्रियों की धार्मिक गतिविधि का साक्ष्य देता है। इन स्थलों को साथ रखने पर लखीसराय प्रारंभिक मध्यकालीन पूर्वी भारत के अध्ययन का महत्वपूर्ण क्षेत्र बन जाता है।

निष्कर्ष

वर्तमान लखीसराय के प्राचीन इतिहास का पुनर्निर्माण केवल आधुनिक प्रशासनिक सीमाओं तक विश्लेषण को सीमित रखकर पर्याप्त रूप से नहीं किया जा सकता। यह क्षेत्र एक व्यापक ऐतिहासिक भूदृश्य का अंग था, जिसमें क्रिमिला राजनीतिक, प्रशासनिक, धार्मिक और नगरीय केंद्र के रूप में महत्वपूर्ण थी।

बलगुदर के अभिलेख इस क्षेत्र को क्रिमिला से जोड़ने का सबसे सुदृढ़ अभिलेखीय आधार देते हैं। *क्रिमिलाधिष्ठान* का उल्लेख इस स्थान के प्रशासनिक और नगरीय महत्व को दर्शाता है, जबकि पाल शासन की विभिन्न अवस्थाओं से संबंधित अभिलेख दीर्घकालीन ऐतिहासिक निरंतरता का संकेत देते हैं (Sircar 137–45)।

लाल पहाड़ी इस ऐतिहासिक चित्र में एक प्रमुख धार्मिक आयाम जोड़ती है। श्रीमद् धर्म विहार के अवशेष आवासीय कक्षों, आँगनों, बरामदों, जल-निकासी व्यवस्था, मूर्तियों, अभिलेखों और अन्य पुरातात्विक सामग्री सहित एक सुनियोजित बौद्ध मठीय परिसर को प्रकट करते हैं (Kumar 33–72)। वैज्ञानिक विश्लेषण उत्खनित विहार के मुख्य आवास को ग्यारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के बीच रखता है (Kumar 321–52)।

अवलोकितेश्वर, मंजुश्री और अन्य बौद्ध अवशेषों से संबद्ध साक्ष्य लाल पहाड़ी को पूर्वी भारत के महायान और वज्रयान बौद्ध धर्म के व्यापक धार्मिक परिवेश में स्थापित करते हैं (Kumar 261–314)। भिक्षुणी विजयश्री भद्रा और दानदात्री मल्लिका देवी से संबंधित साक्ष्य यह भी दर्शाते हैं कि बौद्ध संस्थाओं के चारों ओर की धार्मिक अर्थव्यवस्था में स्त्रियाँ महत्वपूर्ण स्थान रख सकती थीं (Kumar 261–314)।

लई का अभिलेख सामाजिक और राजनीतिक आयाम जोड़ता है। प्रतिमा के निर्माण में विक्रमादेवी की भूमिका अभिजात स्त्रियों की धार्मिक संरक्षण में सक्रिय सहभागिता को प्रदर्शित करती है। साथ ही, यक्षपाल से संबद्ध उपाधियाँ उन्हें निर्णायक रूप से स्वतंत्र शासक सिद्ध करने के बजाय एक उच्च प्रशासनिक या दरबारी पद का संकेत देती हैं (*Inscriptions of Bihar* 118)।

संयुक्त साक्ष्य इस प्रकार लखीसराय को एक जटिल ऐतिहासिक भूदृश्य के रूप में प्रस्तुत करता है, जिसमें **धर्म, राजनीतिक सत्ता, नगरीय जीवन, कलात्मक उत्पादन, संरक्षण और सामाजिक संगठन** परस्पर जुड़े हुए थे।

इसलिए लखीसराय के महत्त्व को "पाल कालीन बौद्ध स्थल" जैसे एक लेबल तक सीमित नहीं करना चाहिए। ऐसा वर्णन इसके पुरातात्विक और अभिलेखीय साक्ष्य की विविधता की अनदेखी करेगा। अधिक उपयोगी दृष्टिकोण यह है कि इस क्षेत्र को **प्राचीन क्रिमिला के सांस्कृतिक भूदृश्य** के रूप में समझा जाए, जिसमें बलगुदर नगरीय-प्रशासनिक केंद्र, लाल पहाड़ी बौद्ध मठिय संस्था और लई अभिजात सामाजिक एवं धार्मिक परिवेश का प्रतिनिधित्व करता था।

Asher, Frederick M. "Sculptures from Rajaona, Valgudar and Jaynagar, Evidence for an Urban Center." *East and West*, vol. 36, nos. 1–3, pp. 227–246.

Kumar, Anil. *Resuscitation of Srimad Dharma Vihara: The Forgotten Hilltop Monastery of Ganga Valley: Excavation Report of Lal Pahari, 2017–2021*. Edited by Amit Ranjan, Bihar Heritage Development Society, Department of Art and Culture, Government of Bihar, 2025.

Sattar, Noor Bano. "Women Donors of Brahmanical Images: A Glimpse from the Image Inscriptions of the Pre-Pala and Pala Rulers of Bengal and Bihar."

Sircar, D. C. "Three Inscriptions from Valgudar." *Epigraphia Indica*, vol. 28, 1950, pp. 137–145. *Annual Reports on Indian Epigraphy*. Archaeological Survey of India.

Inscriptions of Bihar. "The Lai Image Inscription of Vikramadevi, Wife of Yakṣapāla," p. 118. Originally published in *Epigraphia Indica*, vol. 30, pp. 82–84.

"The Past." *Department of Archaeology, Sri Lanka*, Department of Archaeology, Sri Lanka.